भारत में चलनिधि प्रबंधन करना : एक पेशेवर का दृष्टिकोण*

राकेश मोहन

'भारत में चलनिधि प्रबंधन' एक ऐसा विषय है जिसकी व्यापक रूप से चर्चा नहीं होती है परंतु यह दैनिक मौद्रिक प्रबंधन का अनिवार्य अंग है। मैं रिज़र्व बैंक में आने से पहले मौद्रिक विशेषज्ञ नहीं था, लेकिन इस कार्य को करते-करते मैं कुछ गहराई तक पहुंच पाया हूं। वर्तमान समय में यह एक प्रासंगिक एवं आकर्षण का विषय है।

भारी तथा अस्थिर पूंजी प्रवाहों के परिप्रेक्ष्य में मौद्रिक नीति का संचालन तथा प्रबंधन करने में अधिकांश देशों ने कठिनाई का अनुभव किया है। चूंकि भारत ने चालू खाते की परिवर्तनीयता लागू कर दी है तथा उसने 1991 के भुगतान संतुलन संकट के समय से अपने पूंजी खाते को सावधानीपूर्वक क्रमबद्ध तरीके से उदार बना दिया है, अतः उसे भी इस प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ा । उभरती मिली-जुली नीति में नापतौल कर कदम उठाना शामिल था जिसमें केंद्रीय बैंकिंग के विविध उद्देश्यों, मौद्रिक नीति के ढांचे और उसकी परिचालनगत क्रियाविधियों में परिवर्तन तथा चलनिधि प्रबंधन के लिए लिखतों का क्षेत्र व्यापक बनाने का ध्यान रखा गया।

नब्बे के दशक से अर्थव्यवस्था को खोले जाने से पूर्व चालू तथा पूंजी खाते दोनों ही नियंत्रित रखे गए थे। तथापि, व्यापारिक प्रतिबंधों के बावजूद चालू खाता निरंतर घाटे में रहा था, जिसका अधिकांशतः ऋण, आधिकारिक सहायता तथा गैर-सरकारी ऋण - दोनों द्वारा वित्तपोषण करना पड़ता था। संविभाग प्रवाहों की अनुमति नहीं थी तथा विदेशी प्रत्यक्ष निवेश नगण्य थे । बड़े पैमाने पर 'अनियंत्रित' एक मात्र प्रवाह था 'अनिवासी जमाराशियां' जो समष्टि आर्थिक स्थितियों के अनुसार घटती-बढ़ती रहती थीं। विनिमय दर भी नियंत्रित की जाती थी; इसे विविध मुद्रा समूहों से संबद्ध रखा गया था तथा यह सीमित रूप में घटती-बढ़ती रहती थी। परिणामतः, मौद्रिक नीति प्रबंधन के काम में गंभीर समस्याएं नहीं आती थीं, विशेष रूप से इसलिए कि अधिकांश ब्याज दरें प्रशासनिक स्तर पर निर्धारित की जाती थीं।

अर्थव्यवस्था को काफी अधिक खोल दिए जाने तथा ब्याज दरों को अविनियमित किए जाने के बाद ही बाजार द्वारा ब्याज दर के निर्धारण की संभावना महत्वपूर्ण बन गई । परिणामतः रिजर्व बैंक को निरंतर आधार पर प्रयोग करते रहना पड़ा। उसे एक ही साथ, विदेशी मुद्रा बाजार में बाह्य खाते के संबंध में विनिमय दर की अस्थिरता को सीमित करने के लिए तथा घरेलू बाजार में ब्याज दरों की अस्थिरता को रोकने के लिए उपाय करने पड़े। चूंकि विनिमय दर तथा ब्याज दर - दोनों ही मुद्रा की लागत को प्रतिबिंबित करने वाले प्रमुख मूल्य हैं अतः अर्थव्यवस्था के दक्ष कार्यचालन के लिए यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है कि ए बाजार द्वारा निर्धारित हों और इन पर आसानी से नजर रखी जा सके । अत्यधिक घट-बढ़ तथा अस्थिरता से निहित मूल्यों पर एक तरह से परदा पड़ जाता है और संदिग्ध निष्कर्ष निकलने लगते हैं। इसके बाद चलनिधि प्रबंधन का कार्य है फोरेक्स और मुद्रा बाजार लेनदेनों के सुकर बनाने के लिए एक ढांचा उपलब्ध कराना जिसके परिणामस्वरूप, अत्यधिक अस्थिरता के बिना, बाजार की शक्तियों द्वारा ब्याज दर का निर्धारण संभव होने लगता है। डॉलर डॉलर

चलनिधि प्रबंधन और पूंजी प्रवाहों का प्रबंधन

प्रारंभ में मैं चलनिधि प्रबंधन और पूंजी प्रवाहों के प्रबंधन पर कुछ सामान्य टिप्पणी करना चाहूंगा।

समष्टि आर्थिक संदर्भ में, चलनिधि प्रबंधन का संबंध समग्र मौद्रिक स्थितियों से है जो समग्र मौद्रिक संसाधनों की मांग और आपूर्ति के बीच असंतुलन की मात्रा दर्शाती है, लेकिन किसी केंद्रीय बैंक के लिए चलनिधि प्रबंधन की अवधारणा विशिष्टतया ढांचा और केंद्रीय बैंक द्वारा मौद्रिक नीति के अंतिम लक्ष्य के अनुरूप मूल्यों को नियंत्रित करने के उद्देश्य से बैंक के प्रारक्षित धन की राशि को संचालित करने के लिए प्रयुक्त किए जानेवाले उपायों को इंगित करती है। (बिंदसील, 2000)। क्या होता है 'बैंक के प्रारक्षित धन का मूल्य ? बैंक के प्रारक्षित धन का मूल्य अल्पावधि ब्याज दरों के अनुसार निर्धारित किया जाता है। इसे रातभर के अंतर बैंक उधार लेने और ऋण देने की जमानती या गैर-जमानती दरों, जोकि बैंकों द्वारा रखे जानेवाले प्रारक्षित धन को प्रभावित करती हैं, के अनुसार निर्धारित किया जाता है। चूंकि बाजार में स्वयं ही

* भारतीय रिज़र्व बैंक के उप गवर्नर द्वारा 28 जनवरी 2006 को एन एस आर्टस कॉलेज, आणंद में 36वें गुजरात इकोनॉमिक एसोसिएशन में तथा 27 मार्च 2006 को इंदिरा गांधी विकास अनुसधान संस्थान (आइजीआइडीआर) में भारतीय अर्थव्यवस्था में मुद्रा और वित्त पर हुए आठवें वार्षिक सम्मेलन में दिए गए भाषणों पर आधारित। चंदन सिन्हा, मृदल सग्गर और पार्थ रे द्वारा उक्त पेपर तैयार करने के लिए उनके द्वारा दी गई सहायता के लिए लेखक उनके ऋणी हैं।

पारदर्शिता नहीं आ पाती है, अतः केंद्रीय बैंक स्वयं बैंकों के साथ अल्पावधि पुनर्खरीद दायित्वों को प्रभावित करते हुए अल्पावधि ब्याज दरों पर प्रभाव डाल कर कदम उठाता है (बोरिओ, 1977)।

चलनिधि प्रबंधन की जरूरत केंद्रीय बैंकों की चलनिधि को मौद्रिक आधार के अनुसार मापने की अवधारणा से महसूस होती है, क्योंकि केन्द्रीय बैंक मौद्रिक आधार का एकमात्र आपूर्तिकर्ता है। केंद्रीय बैंक द्वारा मौद्रिक आधार की आपूर्ति निम्नलिखित पर निर्भर होती है : (i) करेंसी के लिए जनता की मांग जो मौद्रिक लेनदेन की मात्रा द्वारा निर्धारित होती है तथा धारित मुद्रा की अवसर लागत और (ii) भुगतान के दायित्वों का निपटान करने या उन्हें पूरा करने के लिए बैंकिंग तंत्र की प्रारक्षित धन की जरूरत । इन जरूरतों को पूरा करने के लिए केंद्रीय बैंक अपने समष्टि आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए, वित्तीय स्थिरता की बाध्यकारी परिस्थितियों का ध्यान रखते हुए चलनिधि की स्थितियों को नियंत्रित करने और ठीक करने के भी प्रयास करते हैं । अतः प्रारक्षित धन की जरूरतों या खुले बाजार परिचालनों से बैंक रिज़र्व प्रभावित होते हैं। ऐसा करने में, केंद्रीय बैंक अल्पावधि ब्याज दरों के स्तर को इस प्रकार से प्रभावित करने का प्रयास करते हैं जिससे इन ब्याज दरों की बाजार संबंधी गतिविधियां स्थिर हो जाती हैं, क्योंकि किसी मौद्रिक या मुद्रेतर आस्ति मूल्य की अस्थिरता वास्तविक आउटपुट और निवेश संबंधी निर्णयों की दृष्टि से हानिकर सिद्ध हो सकती हैं। इस दृष्टिकोण से ही कोई केंद्रीय बैंक अपने बाजार परिचालनों को, एक निर्धारित समय में, नियंत्रित करता है ताकि उसकी नीतियों के रुझान का पता चल सके।

केंद्रीय बैंक के चलनिधि प्रबंधन का महत्व, उसके छोटे मुद्रा बाजार परिचालनों के माध्यम से अल्पावधि ब्याज दरों पर अपना पर्याप्त प्रभाव डालने और नियंत्रण लागू करने की क्षमता में निहित होता है। यह क्षमता केंद्रीय बैंक की स्वयं की विश्वसनीयता द्वारा निर्धारित होती है। केंद्रीय बैंक द्वारा किए जानेवाले हस्तक्षेपों का सुस्पष्ट संकेतक प्रभाव पड़ता है। परिणामतः विकसित देशों के केंद्रीय बैंक विशेषतः रातभर की लक्षित ब्याज दर को लक्ष्य बनाते है, जो समग्र अर्थव्यवस्था के लिए संकेत के रूप में कार्य करता है। इसके फलस्वरूप इन लेनदेनों का प्रभाव बाजार के निजी सहभागियों द्वारा किए जानेवाले लेनदेनों से मूलतः भिन्न होता है। किसी केंद्रीय बैंक के चलनिधि प्रबंधन के कार्य में अपेक्षाकृत एक बृहत्तर समग्र अर्थव्यवस्था का दृष्टिकोण शामिल होता है। केंद्रीय बैंक के चलनिधि प्रबंधन का वित्तीय बाजारों पर अल्पाकालीन प्रभाव पड़ता है। तथापि, वास्तविक क्षेत्र और मूल्य स्तर पर पड़ने वाले दीर्घावधिक प्रभाव अपेक्षाकृत ज्यादा महत्वपूर्ण हैं।

वाणिज्य बैंकों द्वारा केंद्रीय बैंक के पास रखे जानेवाले चालू खाता शेषों को प्रभावित करके अथवा अल्पावधि मुद्रा बाजार दर का सीधे प्रभावित करके केंद्रीय बैंक मुद्रा बाजार की चलनिधि को प्रभावित करने का प्रयास करता है ताकि अल्पावधि ब्याज दर को नियंत्रित रखा जा सके। केंद्रीय बैंक सीधे ही, कम से कम एक अल्पावधि ब्याज दर निर्धारित कर सकता है जो पालिसी रेट के रूप में कार्य करे। केंद्रीय बैंक, बाजार को अन्य आय वक्रों को निर्धारित करने की स्वतंत्रता देते हुए अल्पावधि ब्याज दर को नियंत्रित करके आय वक्र पर मौद्रिक नीति के रुझानों का प्रभाव संप्रेषित करने का प्रयास करता है। बदले में, केन्द्रीय बैंक द्वारा निर्धारित आय अर्थव्यवस्था में ऋण देने संबंधी तथा जमाराशि दरों को प्रभावित करती है। बंधक की दरें, विशेष रूप से ब्याज दर और ऋणों के जरिए नीतिगत दर में परिवर्तनों से प्रभावित होती हैं। एक बार बैंकों द्वारा दिए जाने वाले ऋण प्रभावित हो जाने पर, ब्याज दरें वास्तविक चरों जैस खपत एवं निवेश को प्रभावित करती है, जिसके चलते परिणाम (आउटपुट) और मुद्रास्फीति क स्तर प्रभावित होते हैं। इस प्रकार, सक्रिय चलनिधि प्रबंधन का उद्देश्य अल्पावधि ब्याज दरों का एक निश्चित रेंज के भीतर रखना होता है वहीं, इसका मुद्रास्फीति और आउटपुट संबंधी मौद्रिक नीतिगत लक्ष्यों को कार्यान्वित करने का एक दीर्घकालीन परिवर्तनीय उद्देश्य भी रहता है।

मुश्किल की बात यह है कि मौद्रिक नीति काफी अनिश्चितता की स्थिति के अधीन बनाई और कार्यान्वित की जाती है। नीति के अभिप्रेत अंग के रूप में लम्बी अवधियों तक बाजार में निधि उपलब्ध कराए जाने या बाजार से निधि अवशोषित कर लेने ब्याज दरों तथा कुल मांग में परिवर्तन के जरिए आउटपुट और मूल्यों पर प्रभाव पड़ता है। विशेषतः, संप्रेषणकारी प्रभाव देश विशेष से जुड़े मुद्दों और संस्थागत एवं विनियामक ढांचों के अनुसार अलग-अलग देशों में भिन्न हो सकते हैं। सभी देशों में जैसे-जैसे नीतिगत परिवर्तनों का प्रभाव दीर्घ तथा परिवर्ती अंतरालों के साथ पड़ता जाता है, दीर्घकालीन प्रभावों का अनुमान अक्सर नहीं लगाया जा सकता ।

अत्यधिक उन्नत देशों के केंद्रीय बैंकों में चलनिधि प्रबंधन का कार्य ऐसे परिवेश में किया जाता है, जहां मुद्रा की दैनिक मांग विशेषतया उसकी आपूर्ति से अधिक रहती है, लेकिन उभरते बाजारों में चलनिधि प्रबंधन मं काफी भिन्नता रहती है, जिसमें अधिशेष एवं कमी की स्थितियां बदलती रहती हैं और ये संभवतः उनके बाह्य खातों में अधिक घटबढ़ के साथ रहती हैं (सग्गर, 2006)। हाल के वर्षों में पूंजी प्रवाह अधिकांश देशों में, विशेष रूप से एशिया में, चलनिधि प्रबंधन को प्रभावित करनेवाला प्रमुख घटक रहा है; जिन्हें भारी तथा अस्थिर पूंजी प्रवाहों की स्थिति से गुजरना पड़ा है। समरूप चालू खाता घाटे की स्थिति के बने रहने पर पूंजी प्रवाहों का चलनिधि पर बहुत कम प्रभाव पड़ता है क्योंकि समरूप चालू खाता घाटे के कारण अर्थव्यवस्था में पूंजी का अवशोषण हो जाता है, और ये निवेश, रोजगार तथा टेक्नालॉजी आयातों की वृद्धि में तेजी लाते हैं जिसका उत्पादन वृद्धि में योगदान रहता है। जिन स्थितियों में, पूंजी प्रवाह चालू खाता घाटे से अधिक हो जाता है

वहां इसके परिणामस्वरूप विदेशी मुद्रा भंडार बढ़ने लगता है जो स्वयं वित्तीय स्थिरता का सकारात्मक संकेत देनेवाले उपकरण की तरह कार्य करता है।

परंतु गैर निष्प्रभावीकृत पूंजी अंतर्वाह के परिणामस्वरूप मुद्रास्फीति, करेंसी की मूल्यवृद्धि, प्रतिस्पर्धात्मकता का ह्रास हो सकता है और मौद्रिक नियंत्रण कमजोर हो सकता है। यदि ऐसे प्रवाह बड़े पैमाने पर हों तो, मौद्रिक नियंत्रण का तीव्र अभाव पाया जा सकता है। खुले बाजार परिचालनों के जरिए जब इन प्रवाहों को निष्प्रभावी बना दिया जाता है, तब भी निष्प्रभावीकरण की कार्रवाई से घरेलू ब्याज दरें बढ़ जाने पर अत्यंत प्रतिकूल परिस्थिति पैदा हो सकती हैं और परिणामतः अपेक्षाकृत अधिक पूंजी प्रवाहों की स्थिति आ सकती है। निष्प्रभावीकरण के राजकोषीय प्रभाव को भी ध्यान में रखना पड़ेगा, विशेष रूप से तब जब इस प्रयोजन के लिए प्रतिभूतियों का बड़ा स्टाक जारी करने की जरूरत पड़े।

स्पष्ट रूप से, पूंजी प्रवाहों का प्रबंधन करने के लिए समष्टि आर्थिक नीतिगत विकल्प मुश्किल भरे हैं। इन विकल्पों में ऐसे पूंजी प्रवाहों के साथ अक्सर जुडी उच्चस्तरीय अस्थिरता को भी ध्यान में रखना पड़ता है। इन प्रवाहों में अचानक बढ़ोत्तरी तथा कमी होती रहती है, जो कुछ मामलों में सप्ताह में या उससे कम समय में भी होते पाई जाती है । अन्य मामलों में ऐसी बढ़ोत्तरियां अल्प समय के लिए ठहराव की स्थिति के बाद आ सकती हैं। ऐसे ठहराव के कारण मामूली कारणों से भी प्रतिकूल स्थिति आ सकती है। ऐसे भी मामले हैं जहां पूंजी प्रवाह लम्बे अरसे से बने हुए हैं या मध्यावधि में इन प्रवाहों में कमी हो गई थी। संक्षेप में, इन प्रवाहों के बारे में कुछ पूर्वानुमान करना संभव नहीं होता तथा चलनिधि संविभाग का एक तिमाही में भी निर्धारण करना कठिन होता है, जो एक वर्ष से बहुत कम की अवधि है। इसके अलावा, मौद्रिक नीति संबंधी प्रभावों में 3-4 तिमाहियों या अधिक का अंतराल रहा करता है और इन अंतरालों का अक्सर पूर्वानुमान नहीं किया जा सकता।

विशिष्टतया, जिन देशों को पूंजी प्रवाहों की जरूरत होती है वे तीन कठिन समस्याओं की चपेट में आ जाते हैं जिनका पहले उल्लेख किया गया है। सैद्धांतिक आधार के होते हुए भी, ऐसे देशों के उदाहरण इतिहास में प्रचुर मात्रा में हैं जब वैश्विक आस्ति संविभाग के आबंटन से लाभ उठाने के अवसरों के उपस्थित होने की स्थिति में वे सार लक्ष्य प्राप्त कर लेने की लालच में फंसे थे। आब्स्टफेल्ड, शामबाग और टेलर, 2004) । आम तौर पर, देश जैसे-जैसे विषम समस्याओं से जूझते हैं तथा सामान्य मुद्रा क्षेत्र से संबंधित परिस्थितियां व्यापक नहीं होतीं, तब भी वे अपनी मौद्रिक नीतिगत स्वतंत्रता बनाए रखना चाहते हैं। वे वित्तीय स्थिरता या मुद्रास्फीति को सीमित रखने के उद्देश्यों के लिए अपनी विनिमय दरें स्थिर रखने का भी व्यामोह पालते हैं। अधिकांश मामलों में देश ये देश कठिन परिस्थितियां झेलने के बाद, काफी नुकसान झेलते हैं । अधिकाधिक वित्तीय खुलेपन के कारण, कई देशों को विनिमय दर के अधिक लचीलेपन की तरफ बढ़ना पड़ता है अथवा वैश्विक पूंजी बाजार के एकीकरण के लक्ष्य को छोड़कर अपनी मौद्रिक नीति दूसरों के इशारों पर तैयार करनी होती है। तथापि, ऐसी स्थिति काफी नुकसानदेह हो सकती है।

अब मैं अपने देश की स्थिति की बात करुंगा तथा यह विचार करुंगा कि भारत में उभरती स्थितियों का हमने कैसे मुकाबला किया।

भारत में पूंजी प्रवाह

नब्बे के दशक में भारत में, दूरगामी आर्थिक सुधारों के कारण पूंजी खाता उदारीकरण और उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में आस्ति आबंटन के प्रति झुकाव में धीरे धीरे आई कमी के फलस्वरूप पूंजी अंतर्वाहों में तीव्र वृद्धि पाई गई। 1990-91 के दौरान सुस्पष्ट रूप से हमारा देश, अस्सी के दशक में घाटे के वित्तपोषण राजकोषीय विस्तार के और खाड़ी युद्ध के कारण तेल मूल्यों में वृद्धि की स्थिति के कारण अधिक मात्रा में चलनिधि खपा लिए जाने से उत्पन्न भुगतान संतुलन के संकट की ओर बढ़ रहा था। 1991 में चूंकि विदेशी मुद्रा की प्रारक्षित निधि एक महीने से कम की आयात वित्तपोषण आवश्यकताओं से कम हो गई थी, अतः वैश्विक पूंजी के स्रोत बंद हो गए और देश को बहुत बड़ी चूक की वास्तविक संभावना का सामना करना पड़ा। संकट प्रबंधन प्राधिकारी सक्रिय हो गए तथा उन्होंने देश को चूक की स्थिति से बचा लिया। उसके बाद जिजीविषा जग उठी तथा व्यापक आर्थिक सुधारों का मार्ग प्रशस्त हुआ। सुधार की यह गाथा भिन्न भिन्न मंचों पर कई बार बताई जा चुकी है और इसे दोहराने की मेरी कोई इच्छा नहीं है।

1990-91 और 1991-92 के दौरान विदेशी निवेश के प्रवाह, मुख्य रूप से विदेशी प्रत्यक्ष निवेश के रूप में औसतन 118 मिलियन अमेरीकी डॉलर रहे। हमारे पूंजी खाते में उल्लेखनीय परिवर्तन तब हुआ जब 1992 में विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा संविभाग निवेश की अनुमति दी गई। 1998-99 को छोड़कर जब पूर्व एशियाई वित्तीय संकट की संक्रामकता के परिणाम स्वरूप संविभाग प्रवाह ऋणात्मक हो गए थे, वर्ष 2002-03 तक प्रत्यक्ष तथा संविभाग निवेश के रूप में कुल विदेशी निवेश की मात्रा 4-8 बिलियन अमेरीकी डॉलर थी। 1998-99 को छोड़ देने पर, 1993-94 से लेकर 9 वर्षों की अवधि में निवेश औसतन लगभग 5.8 बिलियन अमेरीकी डॉलर के रहे हैं। बाद के दो वर्षों- 2003-04 और 2004-05 में, इसमें फिर से भारी वृद्धि पाई गई, जब औसतन 5.1 बिलियन अमरीकी डॉलर के प्रत्यक्ष निवेश तथा 10.1 बिलियन डॉलर के संविभाग निवेश हुए थे और कुल विदेशी निवेश 15 बिलियन अमरीकी डॉलर से अधिक हो गए थे। ऐसा होने से, अर्थव्यवस्था में, विशेष रूप से 1997-98 के बाद पूंजी प्रवाहों में

336 CMYK

हुई इस वृद्धि के साथ ही औद्योगिक अर्थव्यवस्था में मंदी आई और चालू खाता घाटे के बजाए चालू खाता अधिशेष रहे। परिणामतः अनिवासी जमाराशियों के प्रवाह को छोड़ देने पर भी, इक्विटी निवेश प्रवाह के कारण मौद्रिक प्रबंधन के लिए बड़ी चुनौती खड़ी हो गई।

जहां वर्ष-दर-वर्ष के विदेशी निवेश प्रवाहों से ऐसे पूंजी प्रवाहों की मात्रा का पता चलता है जिन्हें निष्प्रभावित किया जाना जरूरी हो सकता है, माह-दर-माह या आंतर माह घट-बढ़ से इन प्रवाहों की अस्थिरता का बेहतर पता चलता है जिससे केंद्रीय बैंक का चलनिधि प्रबंधन करके निपटना होगा। ये घट-बढ़ काफी बड़ी भी रही है। इनमें संविभाग प्रवाहों का आधिक्य रहा है। जहां इन प्रवाहों में अक्तूबर 2002 तक पूर्व स्थिति पर आने के अत्यल्प मामले दिखाई दिए, वहीं इनमें बाद में व्यापक घट-बढ़ की भारी प्रवृत्ति देखी गई थी। इसका अर्थ है कि अब मौद्रिक प्राधिकारियों को, सुधारों के प्रारंभ होने के समय से एक दशक तक सामने आई समस्याओं की तुलना में, बृहत्तर समस्याओं तथा अधिक अस्थिरता का सामना करना पड़ेगा ।

भारी पूंजी प्रवाहों के चलते अक्तूबर 2000 से विदेशी मुद्रा भंडार में तेजी से वृद्धि हुई है। उस समय से, विदेशी मुद्रा भंडार में 100 बिलियन से भी ज्यादा का उपचय हुआ है जिससे वह 34.9 बिलियन अमरीकी डॉलर से बढ़कर अक्तूबर 2005 में 143.6 बिलियन अमरीकी डॉलर हो गया। इंडिया मिलेनियम डिपाजिट की चुकातियों के कारण यह भंडार दिसंबर 2005 के अंत में कुछ समय के लिए घटकर 135 बिलियन डॉलर हो गया, परंतु 17 मार्च 2006 तक पुनः बढ़कर 146.2 बिलियन अमेरीकी डॉलर हो गया (चार्ट 1)। विदेशी मुद्रा भंडार में उक्त बड़ी मात्रा का उपचय अत्यधिक पूंजी प्रवाहों का परिणाम है। पूंजी प्रवाहों की खपत, बढ़ी हुई घरेलू ऋण वृद्धि के जरिए प्रत्यक्ष या अपरोक्ष रूप से, होती गई है और इसके फलस्वरूप व्यापार घाटे में तीव्र वृद्धि हुई है तथा अभी हाल

चार्ट 1: विदेशी मुद्रा भंडार

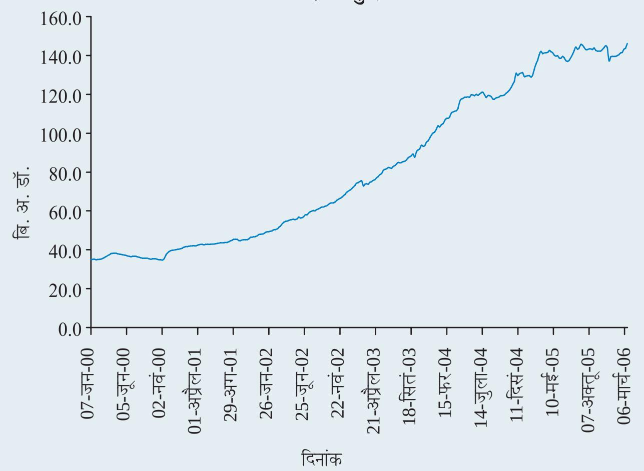

तक अर्थव्यवस्था में भारी मात्रा में अधिक चलनिधि रही है। 1991 की अभाव की स्थिति की समस्या को अब कई लोग प्रचुरता की समस्या के रूप में देख रहे हैं।

इन परिस्थितियों में, मुद्रा प्रबंधन की समस्या द्विस्तरीय थी। सर्वप्रथम, इसमें स्थायी तथा अस्थायी प्रवाहों के बीच में सुस्पष्ट रूप से अंतर करना पड़ा । यदि पूंजी प्रवाहों को स्थायी तथा अनिश्चित काल तक के लिए माना जाए, तो विदेशी मुद्रा प्रबंधन की समस्या होगी । यदि प्रवाहों को अर्द्ध स्थायी माना जाए, जो निश्चित रूप से कारोबारी चक्र का सूचक होगा, तो मौद्रिक तथा चलनिधि प्रबंधन के कार्य द्वारा घरेलू अर्थव्यवस्था पर उनके प्रभाव को संयमित बनाना होगा, जिसमें अधिशेष के समय में चलनिधि को खपा लेने तथा कमी की स्थिति में चलनिधि उपलब्ध कराने का काम करना होगा। दूसरा, अल्पावधि में इन प्रवाहों में होनेवाली दैनिक, साप्ताहिक या मासिक अस्थिरता को सुचारु बनाया जाना चाहिए ताकि रातभर की ब्याज दरों पर पड़नेवाला प्रभाव कम हो। व्यवहार में, यह तय कर पाना मुश्किल है कि क्या स्थायी है, क्या अस्थायी है और क्या अल्पकालिक है। इस कारण, नीति तथा व्यवहार की बातें अनिश्चितता के वातावरण में चलती रहती हैं और ऐसी परिवर्तनशील परिस्थिति में चलनिधि का प्रबंधन करने के लिए विभिन्न प्रकार के साधन प्रयुक्त करने पड़ते हैं।

प्रत्यक्ष से परोक्ष साधनों की ओर

मौद्रिक नियंत्रण के प्रत्यक्ष साधनों से परोक्ष साधनों की ओर बढ़ने की विश्वव्यापी प्रवृत्ती रही है। (एलेक्जेंडर, बालिमो और एनो, 1995)। भारत उभरती अर्थव्यवस्था वाले देशों में से एक है जहां ऐसे परिवर्तन सुस्पष्ट रूप में हुए हैं। नब्बे के दशक में मौद्रिक नीति के ढांचे में बड़ा परिवर्तन हुआ है। बदलते वित्तीय परिदृश्य की प्रतिक्रिया में रिज़र्व बैंक ने ऐसे कई नीतिगत परिवर्तन कर लिए हैं जिनसे मौद्रिक नीति का ढांचा बदल गया है।

मौद्रिक नीति में, चलनिधि की प्रचुरता की समस्या से उत्पन्न चुनौती का समाधान किया जाना था जिसमें नई चुनौतियों का सामना करने के लिए चलनिधि प्रबंधन को और सुदृढ़ किया जाना जाना था। 1991 से किए गए प्रमुख संस्थागत परिवर्तनों द्वारा मौद्रिक नीति ढांचे में परिवर्तनों से समर्थन दिया गया। ऋण की उच्चतम सीमा हटाई गई, हालांकि निदेशित ऋण देने की व्यवस्था जारी रखी गई। ब्याज दरें मुक्त बनाई गई, बचत जमा दर, कुछ एनआरआइ जमा दरें तथा 2 लाख रुपए से कम के ऋणों संबंधी ऋण दरें अपवाद थीं। पूर्णतः नियंत्रित विदेशी मुद्रा विनिमय दर से हटकर, विनिमय दर को बाजार निर्धारित बना लिया गया और चालू खाते में रुपया पूर्ण परिवर्तनीय हो गया, वहीं पूंजी खाता काफी उदार बनाया गया। 1997 में अनुपूरक समझौते पर हस्ताक्षर करके

CMYK 336

बजट घाटे के स्वतः मुद्रीकरण को बंद कर दिया गया। श्रेष्ठ प्रतिभूतियों पर आय बाजार द्वारा निर्धारण योग्य बना दी गई, प्राथमिक स्टॉक बाजार निर्गमों के मूल्यन को मुक्त कर दिया गया। वित्तीय नवोन्मेषों के साथ, मुद्रा की मांग पहले की अपेक्षा कम स्थिर पाई गई और अल्पावधि ब्याज दरें मुद्रा बाजारों में असंतुलन का संकेत देने लगीं। विनिमय दर-मुद्रा आय, मूल्य और ब्याज दर से अत्यंत संबद्ध हो गई। विभिन्न वित्तीय बाजारों के बीच बढ़ती एकात्मता के अधिकाधिक प्रमाण मिल रहे हैं। मुद्रा बाजार विदेशी मुद्रा बाजार के साथ काफी समन्वित हो गया है। इसके अलावा, बाजार की दक्षता, अल्पावधि में कायम रही। मीयादी ढांचा फिर भी विखंडित रहा लेकिन उसका प्रभाव आय वक्र में परिलक्षित हुआ।

बदलते वित्तीय परिदृश्य की प्रतिक्रिया के रूप में, रिज़र्व बैंक ने ऐसे कई नीतिगत परिवर्तन किए जिनसे मौद्रिक नीति के ढांचे में आमूल बदलाव आया। प्रारक्षित नकदी अनुपात (सीआरआर) को जुलाई 1989 से अप्रैल 1993 के दौरान के कुल मांग और मीयादी देयताओं के 15 प्रतिशत के सांविधिक अधिकतम से घटाकर जून 2003 में 4.5 प्रतिशत कर दिया गया जिसे बाद में अक्तूबर 2004 में दो चरणों में बढ़ाकर 5.0 प्रतिशत कर दिया गया। मुख्य रूप से सरकारी प्रतिभूतियों मे रखे जाने वाले सांविधिक चलनिधि अनुपात को, जिसके द्वारा बैंकों को तरल निवेश बनाए रखने के निदेश दिए जाते हैं, जनवरी 1993 के 38.5 प्रतिशत के उच्च स्तर से घटाकर अक्तूबर 1997 तक न्यूनतम 25 प्रतिशत कर दिया गया । मौद्रिक नीति में और अधिक लचीलापन लाने की दृष्टि से अब संसद में एसएलआर तथा सीआरआर के सांविधिक न्यूनतम स्तर को हटा देने के लिए एक विधान प्रस्तुत किया गया है।

मौद्रिक नीति ढांचे की दृष्टि से उल्लेखनीय गतिविधि थी वर्ष 1998 से अपनाया गया 'बहुविध संकेतक दृष्टिकोण' । अस्सी के दशक के मध्य के पूर्व में मौद्रिक नीति अधिकतर मौद्रिक नियंत्रण के प्रत्यक्ष उपायों पर आधारित थी जिसमें बैंकों के ऋण बजट मौद्रिक बजट के साथ सामंजस्य स्थापित करते हुए बनाए जाते थे। इस खंड में तथा बाद के खंडों में उल्लिखित संस्थागत परिवर्तनों के मद्देनजर रिज़र्व बैंक ने 1998-99 से अपना नीतिगत ढांचा 'मौद्रिक टारगेटिंग' से बदलकर 'बहुविध संकेतक दृष्टिकोण' कर लिया। इस दृष्टिकोण के भाग के रूप में, उसने करेंसी, क्रेडिट, राजकोषीय स्थिति, व्यापार, पूंजी प्रवाह, मुद्रास्फीति की दर, विनिमय दर, पुनर्वित्तपोषण और विदेशी मुद्रा के लेनदेनों के साथ विभिन्न बाजारों में विद्यमान ब्याज दरों और प्रतिलाभ दरों से संबंधित सूचना का उपयोग करना और भावी नीतिगत परिवर्तनों के लिए उनकी तुलना करना आरंभ कर दिया।

परोक्ष उपायों के जरिए चलनिधि प्रबंधन : प्रारंभिक प्रवृत्तियां

रिपो के आगमन के पहले रिज़र्व बैंक के बाजार परिचालन, सरकारी प्रतिभूतियों के एकमुश्त लेनदेन के जरिए खुले बाजार परिचालनों पर ही अनिवार्यतः केंद्रित रहते थे। पूर्व में, खुले बाजार परिचालनों की गुंजाईश सीमित थी क्योंकि तब आय, चालू आधार पर खजाना बिलों की 4.6 प्रतिशत के निश्चित कूपन पर नीलामियों सहित, एक ब्याज दर प्रणाली से प्रशासित दर की रहती थी। कूपन बढ़ाते हुए तथा सरकारी ऋणों की परिपक्वता अवधि घटाते हुए गौण बाजार का विकास करते हुए बाजार निर्धारित ब्याज दर प्रणाली की दिशा में बढ़ना प्रारंभ हुआ।[1] अस्सी के दशक के मध्य से नीलामियां शुरु करते हुए आय को बड़े पैमाने पर बाजार द्वारा निर्धारण योग्य बना दिया गया।[2] रिज़र्व बैंक ने दिसंबर 1992 से चलनिधि को खपा लेने के लिए रिवर्स रिपो लागू किया।[3] प्रणाली में विद्यमान चलनिधि के अल्पावधि प्रबंधन तथा मांग/सूचना मुद्रा बाजार में ब्याज दरों को सुचारु बनाने के उद्देश्य से रिज़र्व बैंक ने रिवर्स रिपो (तत्कालीन रिपो) की नीलामी के जरिए अधिक चलनिधि को खपा लेना प्रारंभ किया। चलनिधि समायोजन सुविधा के रूप में रिपो का एक पूर्ण विकसित मौद्रिक साधन के रूप में विकास एक चित्ताकर्षक वृत्त अध्ययन रहा है और इसके अनुसार परिचालन ढांचे में परिवर्तन किए गए। इन गतिविधियों का कालक्रम बॉक्स 1 में दिया गया है। 2003-04 तक बाजार परिचालन सरकारी प्रतिभूतियों की एकमुश्त बिक्री और खरीद के रूप में थे (चार्ट 2) । उस समय से, चलनिधि समायोजन सुविधा की मात्रा काफी बढ़ गई (चार्ट 3)। एलएएफ का महत्वपूर्ण योगदान रातभर की ब्याज दरें समग्रतः एक निश्चित दायरे में रखना था। मौद्रिक नीति के साधन के रूप में बैंक दर को सक्रिय बनाए जाने के साथ ही, मुद्रा बाजार में एक औपचारिक कारिडॉर बनाने में रिवर्स रिपो सहायक बना तथा रिवर्स रिपो दर आधारभूत दर और बैंक दर उच्चतम दर रही। इन दोनों साधनों का प्रयोग करने से रिज़र्व बैंक मांग दर को समग्रतः इस अनौपचारिक कोरीडोर में रख पाया।

1 1985-86 से 1997-98 के दौरान अधिकतम कूपन दर 6.5 प्रतिशत से बढ़ाकर 11.5 प्रतिशत कर दी गई। अधिकतम परिपक्वता 30 से घटाकर 20 वर्ष कर दी गई।

2 खजाना बिलों की नीलामियों में नवंबर 1986 में जारी 182 दिवसीय खजाना बिल, अप्रैल 1992 में जारी 364 दिवसीय खजाना बिल और जनवरी 1993 में जारी 91 दिवसीय खजाना बिल शामिल हैं।

3 उस समय प्रयुक्त शब्द था 'चलनिधि' खपा लेने के लिए 'रिपो' और प्रक्षेपित करने के लिए 'रिवर्स रिपो' । अंतरराष्ट्रीय स्तर पर, व्यवहार में, आम तौर पर केंद्रीय बैंक चलनिधि प्रक्षेपित करने के लिए 'रिपो' शब्द का प्रयोग करते हैं। रिपो निधियां उधार लेने के लिखत के रूप में परिभाषित है। केंद्रीय बैंकों ने बाजार के दृष्टिकोण से इस शब्द के प्रयोग का विकल्प दिया है। रिजर्व बैंक ने इसे 29 अक्तूबर 2004 से अपनाया है और इस नई परिभाषा के अनुसार रिपो और रिवर्स रिपो शब्द का प्रयोग किया जाता है।

चार्ट 2: निवल क्रय (+)/ निवल विक्रय (-)
[दिनांकित प्रतिभूतियां]

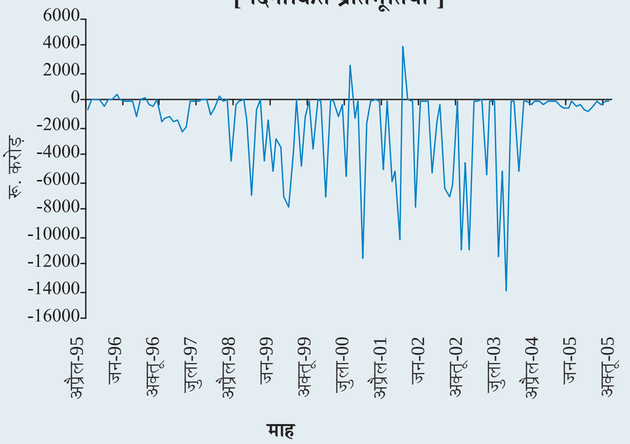

चार्ट 3: एलएएफ के माध्यम से चलनिधि की निवल पूर्ति (+)/अवशोषण (-)

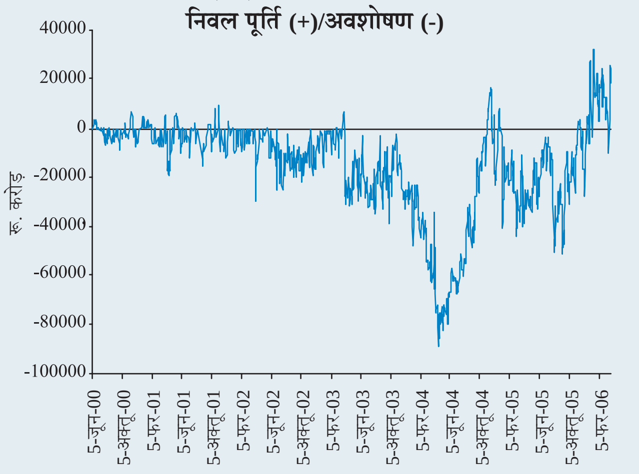

हालांकि रिपो नीलामियां एलएएफ लागू करने के समय परिवर्तनीय दरों पर की जाती थीं ताकि त्वरित ब्याज दर संकेत दिए जा सकें ; फिर भी रिजर्व बैंक को रातभर के आधार पर निर्धारित दर रिपो अपनाने का विकल्प था ताकि अप्रत्याशित घरेलू या बाह्य गतिविधियों से निपटा जा सके। एलएएफ एकसमान मूल्य नीलामियों के आधार पर शुरू किया गया था परंतु नीलामी प्रणाली को 5 मई 2001 से बदलकर बहुविध मूल्य व्यवस्था पर आधारित नीलामियों में बदल दिया गया (बॉक्स 1)

एलएएफ शुरू करने के कई लाभ थे :

- सबसे पहले, इससे सीधे मौद्रिक नियंत्रण से परोक्ष नियंत्रण की ओर बढ़ने तथा इस प्रक्रिया में प्रणाली को होनेवाले कतिपय भारी घाटों से बचाया जा सका।
- दूसरे, इससे मौद्रिक प्राधिकारियों को समायोजनों की मात्रा तय करने तथा दैनिक आधार पर प्रणाली की जरूरतों के अनुसार दरें तय करने- दोनों के लिए अपेक्षाकृत अधिक लचीलापन प्राप्त हुआ है।
- तीसरे, इससे रिज़र्व बैंक प्रति दिन की चलनिधि संबंधी असंगतियों को दूर करने के लिए दैनंदिन आधार पर निधियों की आपूर्ति को नियंत्रित कर सका है।
- चौथे, इससे केंद्रीय बैंक नीति संबंधी दरों में बदलाव के जरिए निधियों की मांग को प्रभावित करने में समर्थ बना है।
- पांचवां और सबसे महत्वपूर्ण, इससे अल्पावधि मुद्रा बाजार दरों को स्थिर करने में सहायता मिली है।

मांग दर अधिकांशतः रिपो और रिवर्स रिपो दरों द्वारा निर्धारित रेंज के भीतर रही है जिससे वित्तीय बाजारों को काफी स्थिरता प्राप्त हुई। जैसा पहले कहा गया है, ऐसा कॉरीडार धीरे-धीरे उभरा है। संक्रमण की यह अवस्था, जैसा पाठ्यपुस्तकों में कहीं-कहीं बताया जाता है, पसंद के अनुसार चयन की बात नहीं होती।

अब एलएएफ मौद्रिक नीति के प्रमुख परिचालन उपाय के रूप में उभरा है। हालांकि अब रातभर की ब्याज दरों को औपचारिक रीति से लक्षित नहीं किया जा रहा है, फिर भी चलनिधि समायोजन सुविधा रातभर की ब्याज दरों को एक विशिष्ट कॉरीडोर के भीतर बनाए रखने के लिए तैयार की गई है जिसके अनुसार निर्धारित रिपो और रिवर्स रिपो दरों के बीच अंतर फिलहाल 100 आधार अंक है। एलएएफ के कारण रिज़र्व बैंक, बैंकों की प्रारक्षित निधि को लक्षित करने पर कम बल देने तथा ब्याज दरों पर अधिकाधिक ध्यान केंद्रित करने में समर्थ हुआ है। इससे मौद्रिक नियंत्रण पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना सीआरआर घटाने में सहायता मिली है।

अभी हाल की अवधि में चलनिधि प्रबंधन

अब मैं हाल के वर्षों में चलनिधि प्रबंधन के विषय में अपने अनुभव पर ध्यान केंद्रित करना चाहूंगा । मई 2001 में एलएएफ के दूसरे चरण को लागू करने के बाद चलनिधि आम तौर पर अधिशेष में रही है और पूंजी प्रवाहों के स्तरों में वृद्धि तथा 2003-04 तक चालू खाता अधिशेष की स्थिति रही। विदेशी मुद्रा भंडार में निरंतर बढ़ोत्तरी के साथ इसके अनुरूप प्रणाली में चलनिधि डाली भी जाती रही जिसे निष्प्रभावी करना पड़ा । इसी के साथ, रिवर्स रिपो नीतिगत ब्याज दर को मार्च 2002 के 6 प्रतिशत से घटाकर अगस्त 2003 तक 4.5 प्रतिशत कर दिया गया, जिसके बाद में चार बार प्रत्येक चरण में 25 आधार अंकों की वृद्धि करके जनवरी 2006 तक वह बढ़कर 5.50 प्रतिशत कर दिया गया। इस प्रकार, मौद्रिक नीति का लक्ष्य प्रणाली में रातभर की मांग मुद्रा बाजार दरों को अनौपचारिक ब्याज दर कॉरिडोर के भीतर रखना था।

समग्रतः, एलएएफ का अल्पावधि मुद्रा बाजार दरों की अस्थिरता को कम करने में काफी अनुकूल प्रभाव पड़ा है। मासिक औसत मांग दरें जो 1990-1998 के दौरान 5 से 35 प्रतिशत के दायरे में अस्थिर रही थीं,

बॉक्स 1 : चलनिधि समायोजन सुविधा

किसी भी अर्थव्यवस्था में परिचालन ढांचा और परिचालनगत क्रियाविधियों का विकल्प चुनना हमेशा कठिन होता है जो समष्टि आर्थिक और वित्तीय क्षेत्र में हुई प्रगति के स्तर की गतिविधि पर निर्भर रहता है तथा यह प्रक्रिया धीरे-धीरे विकसित होती है। 1991 के मध्य में लागू किए गए वित्तीय क्षेत्र के सुधार के भाग के रूप में, भारत ने मौद्रिक नियंत्रण के सीधे उपायों से हटकर परोक्ष उपाय अपनाना प्रारंभ किया। इस तरह के बदलाव में बाजार, संस्थाएं तथा संव्यवहार विकसित करने संबंधी पर्याप्त प्रयास निहित होते हैं। ऐसे बदलाव को सुकर बनाने की दृष्टि से भारत ने भारतीय वित्तीय प्रणाली की विशिष्ट विशेषताओं को देखते हुए, चरणबद्ध रूप में एक चलनिधि समायोजन सुविधा (एलएएफ) विकसित की। एलएएफ केंद्रीय बैंक द्वारा किए जानेवाले रिपो/रिवर्स रिपो परिचालनों पर आधारित है।

1998 में बैंकिंग क्षेत्र के सुधार पर समिति (नरसिंहम समिति II) ने चलनिधि समायोजन सुविधा लागू करने की सिफारिश की थी जिसके अधीन रिज़र्व बैंक यदि दैनंदिन नहीं तो समय-समय पर नीलामी संचालित करेगा। रिज़र्व बैंक अपनी रिपो और रिवर्स रिपो दरें पुनर्निधारित कर सकता है जिससे मांग मुद्रा बाजार के लिए यथोचित कॉरीडोर उपलब्ध कराया जा सकता है। इन सिफारिशों के अनुसरण में अप्रैल 1999 में परिचालन की क्रियाविधि में एक बड़ा परिवर्तन अंतरिम चलनिधि समायोजन सुविधा लागू करते हुए किया जा सका जिसके अधीन रिपो और रिवर्स रिपो को औपचारिक बनाया गया । अंतरिम चलनिधि समायोजन सुविधा लागू करने के साथ ही, सामान्य पुनर्वित्तपोषण सुविधा हटा ली गई और इसके स्थान पर 1997-98 में दो सप्ताहों के लिए, कुल जमाराशियों के बकाया पाक्षिक औसत के 0.25 प्रतिशत की सीमा तक, बैंक दर पर संपार्श्विक ऋण सुविधा लाई गई। बैंक दर से 2 प्रतिशत अधिक की दर पर, सीएलएफ की राशि के समकक्ष तक अतिरिक्त संपार्श्विक ऋण सुविधा उपलब्ध कराई गई। दो सप्ताहों के ऊपर ली जानेवाली सीएलएफ और एसीएलएफ पर, अतिरिक्त दो सप्ताहों की अवधि के लिए 2 प्रतिशत की दंडात्मक दर की शर्त लगाई गई। अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के लिए निर्यात ऋण पुनर्वित्त बनाए रखा गया और यह बैंक दर पर दिया जाता रहा। प्राथमिक व्यापारियों को सरकारी प्रतिभूतियों की जमानत पर बैंक दर पर चलनिधि समर्थन भी उपलब्ध कराया गया। अंतरिम एलएएफ से मुद्रा बाजार में स्थिरता को बढ़ावा मिलने तथा यह सुनिश्चित होने की आशा थी कि ब्याज दरें यथोचित दायरे में घटती-बढ़ती रहें।

अंतरिम एलएएफ से पूर्ण एलएएफ की ओर बढ़ना जून 2000 में प्रारंभ हुआ और इसे तीन चरणों में किया गया। पहले चरण में 5 जून 2000 से एलएएफ औपचारिक रूप से लागू की गई और अतिरिक्त संपार्श्विक ऋण सुविधा और प्राथमिक व्यापारियों के लिए स्तर II के समर्थन के स्थान पर परिवर्तनीय दर वाली रिपो नीलामियां लागू की गईं जिसमें उसी दिन निपटान किया जाता है। दूसरे चरण में, मई 2001 से प्रारंभ कर संपार्श्विक ऋण सुविधा और बैंकों तथा प्राथमिक व्यापारियों को दिए जानेवाले एवं स्तर I चलनिधि समर्थन के स्थान पर भी परिवर्तनीय दर वाली रिपो नीलामियां लाई गईं। प्राथमिक व्यापारियों को कुछ न्यूनतम चलनिधि समर्थन जारी रखा गया परंतु यह रिज़र्व बैंक द्वारा समय समय पर निर्धारित प्रकार से दैनिक रिपो नीलामियों की परिवर्तनीय दर से संबद्ध ब्याज दर पर था। अप्रैल 2003 में, उन बहुविध दरों, जिनपर चलनिधि को 'बैक स्टॉप' सुविधा के अंतर्गत खपा लिया/उपलब्ध कराया जा रहा था, को युक्तिसंगत बनाया गया और बैक स्टॉप ब्याज दर को उस दिन होनेवाली नियमित एलएएफ नीलामियों की रिवर्स रिपो कट-ऑफ दर पर निर्धारित किया गया। एलएएफ नीलामियों में कोई भी रिवर्स रिपो न होने पर बैक स्टॉप दर रिपो की कट-ऑफ दर के 2.0 प्रतिशत ऊपर अंक पर निर्धारित की गई थी। यह भी घोषित किया गया कि जब कोई रिपो/रिवर्स रिपो बोलियां प्राप्त नहीं होतीं/स्वीकार नहीं की जातीं,उस दिन रिज़र्व बैंक तदर्थ आधार पर बैक स्टॉप दर निश्चित करेगा। 29 मार्च 2004 से संशोधित एलएएफ योजना परिचालन में लाई गई जिसके अधीन रिवर्स रिपो दर घटाकर 6.0 प्रतिशत करके बैंक दर के समरूप की गई। सामान्य सुविधा तथा बैक स्टॉप सुविधा को मिलाकर एक एकल सुविधा बना दी गई एवं इसे एकल दर पर उपलब्ध कराया गया। पूर्ण विकसित एलएएफ का तीसरा चरण लोक ऋण कार्यालय के संपूर्ण कंप्यूटरीकरण के साथ प्रारंभ हुआ और इस चरण में आरटीजीएस लागू करना एक बड़ा कदम रहा। अब रिपो परिचालन मुख्यतः इलेक्ट्रानिक अंतरणों के जरिए होते हैं। अप्रैल 2004 से निर्धारित दरवाली नीलामियां पुनः शुरु की गई हैं। एक ही दिन के विभिन्न समयों पर एलएएफ को परिचालित किए जाने की संभावना अब वास्तव में हो ही जाएगी। इस रूप में, हमने एक स्वयंपूर्ण एलएएफ परिचालित करने की अवस्था लगभग पूरी कर दी है।

28 नवंबर 2005 को दूसरा एलएएफ शुरू करने के साथ अब बाजार सहभागियों को चलनिधि के प्रबंधन को सुचारु बनाने के लिए एक दूसरी अतिरिक्त सुविधा भी प्राप्त हो गई है। पहले, एलएएफ परिचालन पूर्वाह्न में 9.30 बजे और 10.30 बजे के बीच किए जाते थे। द्वितीय एलएएफ दोपहर 3.00 बजे और 3.45 के बीच बोलियां प्राप्त करके चलाए जाते हैं । द्वितीय एलएएफ की मुख्य विशेषताएं एलएएफ के समान ही हैं और दोनों के लिए निपटान अलग-अलग तथा सकल आधार पर होता है।

एलएएफ लागू करना एक प्रक्रिया रही है और इस संदर्भ में भारत का अनुभव यह रहा है कि वित्तीय क्षेत्र के सुधारों के लिए तथा मौद्रिक प्रबंधन के संबंध में एक बड़े धमाके के दृष्टिकोण की अपेक्षा चरणबद्ध रूप से कदम उठाने की जरूरत है।

संदर्भ :

रिज़र्व बैंक (1999), *रिपर्चेस एग्रीमेंट्स (रिपो): सरकारी प्रतिभूति बाजार के संबंध में गठित तकनीकी सलाहकार समिति के उप समूह की रिपोर्ट,* अप्रैल 1999, *भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई।*

रिज़र्व बैंक (2003), *चलनिधि समायोजन सुविधा पर आंतरिक दल की रिपोर्ट, दिसंबर 2003, भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई।*

बाद में स्पष्टतः स्थिर हो गईं और वे अब आम तौर पर 5-10 के बीच बनी हुई हैं (चार्ट-4)। एलएएफ लागू किए जाने के बाद मांग दरें अधिकांशतः अनौपचारिक ब्याज दर कॉरिडोर से बंधी रही हैं (चार्ट 5) । रिपो और रिवर्स रेपो के बीच का कॉरिडोर, जो प्रारंभ में 200 आधार अंकों पर निर्धारित था और जिसे अगस्त 2003 में और व्यापक बनाकर 250 आधार अंक किया गया था, मार्च 2004 में घटकर 150 आधार अंक तथा बाद में अक्तूबर 2004 तक 125 आधार अंक और अप्रैल 2005 में और घटाकर 100 आधार अंक कर दिया गया । मांग दरें, केवल फरवरी-अप्रैल 2003 तथा अक्तूबर 2004 और जनवरी 2005 के बीच की अल्प अवधि को छोड़कर, जून 2002 से न्यूनतर कॉरिडोर के आसपास बनी रही। फिर से, अक्तूबर 2005 से प्रणाली स्पष्टतः बने रहनेवाले अधिशेष से मामूली घाटे की ओर बढ़ती नजर आ रही है।

वर्ष 2002 के मध्य से मुद्रा प्रबंधन में स्पष्टतः अधिशेष चलनिधि के प्रबंधन पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है। एलएएफ के परिचालन एवं खुले बाजार परिचालन साथ-साथ करके यह लक्ष्य हासिल किया गया।

रिज़र्व बैंक के पास सरकारी प्रतिभूतियों के सीमित स्टाक हैं, अतः उसकी अनिश्चित काल के लिए भारी पूंजी प्रवाहों को प्राप्त करते रहने की क्षमता सीमित थी और एलएएफ परिचालनों को स्थापित करने का बहुत ज्यादा भार उठाना पड़ा। साथ ही, एलएएफ को इस प्रकार तैयार किया गया था कि दैनंदिन आधार पर होने वाली कल्पित चलनिधि पर ध्यान रखा जाएगा और इस कारण उसका कार्य, अपने आप ही, चलनिधि के ऐसे निष्प्रभावीकरण के चलते दुष्प्रभावित होने लगा था।

इन समस्याओं का समाधान करने के लिए रिज़र्व बैंक ने चलनिधि के निष्प्रभावीकरण के उपायों पर विचार करने के लिए एक कार्यकारी दल (अध्यक्ष : श्रीमती उषा थोरात) नियुक्त किया । पर्याप्त चर्चा के बाद परिणाम यह निकला कि बाजार स्थिरीकरण योजना (एमएसएस) के अधीन खजाना बिल और दिनांकित प्रतिभूतियां जारी करने के संबंध में रिज़र्व

चार्ट 4: मांग मुद्रा दरें

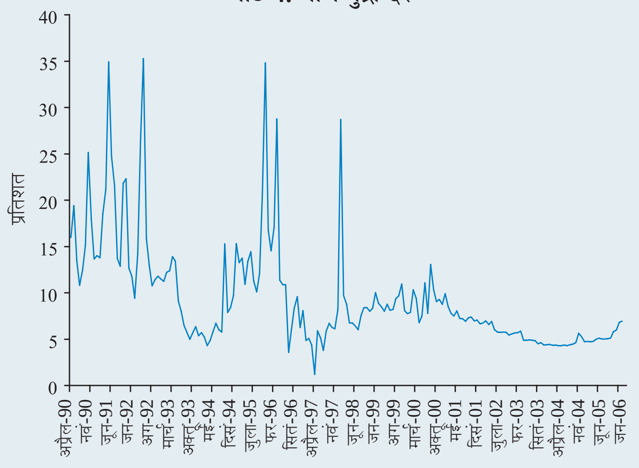

चार्ट 5: मांग मुद्रा दर की घट-बढ़ और एलएफ का दायरा

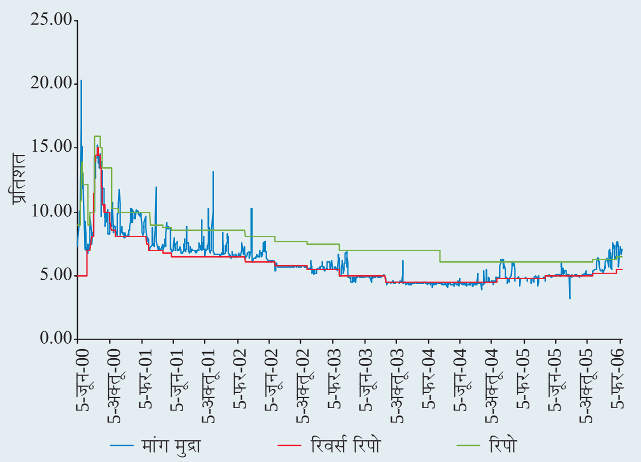

बैंक ने 25 मार्च 2004 को भारत सरकार के साथ समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए। इस नई व्यवस्था ने रिज़र्व बैंक को चलनिधि को अधिक समय तक परंतु फिर भी अस्थाई आधार पर खपा लेने की शक्तियां प्रदान कीं। इसका उद्देश्य बाजार स्थिरीकरण योजना का निष्प्रभावीकरण परिचालनों का प्रबंधन करने के लिए प्रयोग करते हुए और साथ ही, इससे भी अधिक दीर्घ आधार पर चलनिधि के अवशोषण या प्रक्षेपण के लिए अधिक पारंपारिक खुले बाजार परिचालनों को प्रयुक्त करते हुए चलनिधि समाशोधन सुविधा का उपयोग दैनिक स्थिति के नियंत्रण के लिए करना था। बाजार स्थिरीकरण योजना की प्रमुख विशेषताएं बॉक्स II में दी गई हैं।

जैसा कि स्पष्ट किया गया है, बॉक्स II बाजार स्थिरीकरण योजना की आय सरकार द्वारा रखे तथा रिज़र्व बैंक द्वारा परिचालित किए जानेवाले अलग पहचान योग्य नकदी खाते में रखती है। इस खाते में रखी जानेवाली राशि केवल खजाना बिलों और / या बाजार स्थिरीकरण योजना के अधीन जारी दिनांकित प्रतिभूतियों की चुकौती और/या पुनर्खरीद के लिए लगाई जाती है। एमएसएस के अधीन बकाया राशि की उच्चतम सीमा प्रारंभ में 60,000 करोड़ रुपए निर्धारित की गई थी परंतु समझौता ज्ञापन के प्रावधानों के अनुसरण में यह 14 अक्तूबर 2004 को बढ़ाकर 80,000 करोड़ रुपए (बट्टाकृत मूल्य) की गई और अब इसे घटाकर 70,000 करोड़ रुपए कर दिया गया है। बाजार स्थिरीकरण योजना के अधीन खपा ली गई कुल बकाया राशि 2 सितंबर 2005 की स्थिति के अनुसार बढ़कर 78,906 करोड़ रुपए से अधिक हो गई परंतु तब से वह घटती जा रही है और इस समय वह 30,000 करोड़ रुपए रह गई है। बाजार स्थिरीकरण योजना के माध्यम से लगभग 50,000 करोड़ रुपए की चलनिधि जारी की जा चुकी है, यहां तक कि समग्र सीमांत चलनिधि अधिशेष से बदलकर घाटे की स्थिति तक पहुंच गई है।

बाजार स्थिरीकरण योजना प्रारंभ करने से चलनिधि समाशोधन सुविधा को उसके दैनंदिन चलनिधि प्रबंधन के वांछित कार्य के लिए

बाक्स II : बाजार स्थिरीकरण योजना

वर्ष 2002 से मुद्रा बाजार परिचालन भारी पूंजी अंतर्वाहों तथा चालू खाता अधिशेष के कारण चलनिधि के अधिशेष की स्थिति में परिचालित हो रहे थे। निष्प्रभावीकरण का प्रारंभिक भार दिनांकित प्रतिभूतियों और खजाना बिलों के एकमुश्त लेनदेनों पर पड़ता था। तथापि, सरकारी प्रतिभूतियों के स्टाक कम हो जाने के कारण चलनिधि समायोजन का भार चलनिधि समाशोधन सुविधा पर आ गया जो अनिवार्यतः सीमांत चलनिधि के समायोजन का साधन है। टिकाऊ स्वरूप की चलनिधि को चलनिधि समाशोधन सुविधा से इतर उपायों का प्रयोग करते हुए खपा लेने के उद्देश्य के मद्देनजर, रिज़र्व बैंक ने चलनिधि के निष्प्रभावीकरण के साधनों पर विचार करने के लिए एक कार्यकारी दल (अध्यक्ष : श्रीमती उषा थोरात) नियुक्त किया। दल ने सिफारिश की कि खजाना बिल और दिनांकित प्रतिभूतियां बाजार स्थिरीकरण योजना के अधीन जारी की जाएं जिसमें बाजार स्थिरीकरण योजना की आय को सरकार द्वारा, रिज़र्व बैंक द्वारा परिचालित किए जानेवाले पहचानयोग्य अलग नकदी शेष खाते में रखा जाना था। बाजार स्थिरीकरण योजना खाते में जमा राशि को केवल खजाना बिलों और / या बाजार स्थिरीकरण योजना के अधीन जारी की जानेवाली दिनांकित प्रतिभूतियों की चुकौती और / या पुनर्खरीद के प्रयोजन के लिए ही विनियोजित किया जाएगा। सिफारिशों के अनुसरण में भारत सरकार और रिज़र्व बैंक ने 25 मार्च 2004 को एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए। समझौता ज्ञापन के अंग के रूप में, योजना को अप्रैल 2004 से कार्यान्विव किया गया।यह स्वीकार किया गया कि सरकार प्रणाली से चलनिधि को खपा लेने के लिए, सामान्य उधार जरूरतों के अतिरिक्त की राशि को खपा लेने के लिए खजाना बिल और / या दिनांकित प्रतिभूतियां जारी करेगी। ये प्रतिभूतियां रिज़र्व बैंक द्वारा नीलामी के रूप में जारी की जाएंगी तथा इन प्रतिभूतियों में वर्तमान खजाना बिलों और दिनांकित प्रतिभूतियों की सभी विशेषताएं होंगी। वे अन्य किसी बाजार योग्य सरकारी प्रतिभूतियों की तरह ही उपलब्ध कराई जाएंगी। बाजार स्थिरीकरण योजना प्रतिभूतियां सांविधिक चलनिधि अनुपात, रिपो और चलनिधि समायोजन सुविधा के लिए पात्र प्रतिभूतियां मानी जाएंगी।

बाजार स्थिरीकरण योजना में प्रतिभूतियों पर ब्याज तथा बट्टे का भुगतान बाजार स्थिरीकरण योजना खाते से नहीं किए जाते है। प्रीमियम की देय प्राप्तियां और / या उपचित ब्याज भी एमएसएस खाते में जमा नहीं की जाती है। प्राप्तियां और ब्याज, प्रीमियम और बट्टे के भुगतान बजट और अन्य दस्तावेजों में अलग उप-शीर्ष के अंतर्गत दर्शाए जाते हैं। बाजार स्थिरीकरण योजना प्रयोजन के लिए जारी किए जानेवाले खजाना बिलों तथा दिनांकित प्रतिभूतियों का मिलान रिज़र्व बैंक के पास सरकार द्वारा रखे गए समकक्ष नकदी शेष के साथ किया जाता है। इस प्रकार, इनका सरकार के राजस्व तथा राजकोषीय शेषों पर प्रभाव बाजार स्थिरीकरण योजना के अधीन बकाया राशि पर ब्याज भुगतानों की सीमा तक केवल मामूली ही रहता है।

लंबे समय तक बने रहनेवाले चलनिधि अधिशेष को अवशोषित करने के लिए नीति निर्धारित करने का लिए विकल्प अपनी स्वयं की प्रतिभूतियां जारी करनेवाले केंद्रीय बैंक या अतिरिक्त प्रतिभूतियां जारी करनेवाली सरकार के बीच रहता है। चिली, चीन, कोलंबिया, इंडोनेशिया, कोरिया, मलेशिया, पेरू, फिलीपीन्स, रूस, श्रीलंका, ताइवान और थाइलैंड जैसे कई देशों ने केंद्रीय बैंक प्रतिभूतियां जारी की हैं। तथापि इनमें से अधिकांश देशों के केंद्रीय बैंकों को अपने तुलनपत्रों की गुणवत्ता में गिरावट का सामना करना पड़ा। इस प्रकार, सरकारी खाते पर,निष्प्रभावीकरण बांड जारी करने के फायदे हैं। यह पहले ही सुस्थापित सरकारी ऋण बाजार के मामले में ऐसा करना अधिक सही है, जहां आवरलैपिंग परिपक्वता के नए केंद्रीय बैंक बिल जारी करने से काफी संदिग्धता फैल जाएगी तथा बाजार के सेगमेंट बन जाने की संभाव्यता बनेगी जिससे आय वक्र के अस्पष्ट हो जाने, लिखतों की तरलता घट जाने और परिचालन और अधिक जटिल बन जाने की संभावना है।

बाजार स्थिरीकरण योजना के कारण रिज़र्व बैंक की विनिमय दर तथा मौद्रिक प्रबंधन करने की क्षमता बढ़ गई है। इसके चलतेअल्पावधि (91 दिवसीय, 182 दिवसीय और 364 दिवसीय खजाना बिलों) और मध्यावधि (दिनांकित प्रतिभूतियां) परिपक्वतावाले लिखतों द्वारा अधिशेष चलनिधि को खपा लेने में मदद मिली है। आम तौर पर, अल्पावधि लिखतों को तरजीह दी जाती है। इससे मौद्रिक प्राधिकारियों को, चलनिधि की स्थिति के संक्रमण काल में चलनिधि प्रबंधन में काफी स्वतंत्रता मिली है।

संदर्भ :

रिज़र्व बैंक (2003), *निष्प्रभावीकरण के उपायों पर कार्यकारी दल की रिपोर्ट, मुंबई, भारतीय रिज़र्व बैंक, दिसंबर 2003।*

नियोजित करने में सफलता मिली है। नवंबर 2004 में एमएसएस की मात्रा औसतन 54,000 करोड़ रुपए थी, कुल अधिशेष चलनिधि औसत लगभग एमएसएस के लागू होने के पहले के स्तर का था क्योंकि अधिक पूंजी प्रवाह जारी रहे। उसके बाद एलएएफ परिचालन पुनः अधिशेष की स्थिति में पहुंच गए और मार्च 2005 तक उनका औसत लगभग 30,000 करोड़ रुपए था और जैसा एलएएफ, एमएसएस और लगभग 1,15,000 करोड़ रुपए के सरकारी नकदी शेष द्वारा प्रतिबिंबित हुआ। सितंबर 2005 तक कुल अधिशेष चलनिधि 1,20,000 करोड़ रुपए से अधिक हो गई। तथापि, उसके बाद चलनिधि की स्थिति में उल्लेखनीय बदलाव आया । मौद्रिक नीति के रुझान में आए बदलाव के साथ अक्तूबर 2004 से प्रारंभ कर नीति दर के चार बार ,प्रत्येक में 25 आधार अंक बढ़ जाने, उच्च ऋण वृद्धि तथा इंडिया मिलेनियम डिपॉजिट देयताओं की 7.1 बिलियन अमेरीकी डॉलर की भारी चुकौती के साथ चलनिधि समाशोधन सुविधा के स्तर दिसंबर 2005 में फिर से सम स्थिति में आई और उसके बाद चलनिधि समाशोधन सुविधा के जरिए चलनिधि उपलब्ध कराई जाती रही है (चार्ट 6) ।

चार्ट 6: एलएएफ और एमएसएस के माध्यम से भा.रि. बैंक का चलनिधि प्रबंधन (अवशोषण + / पूर्ति-)

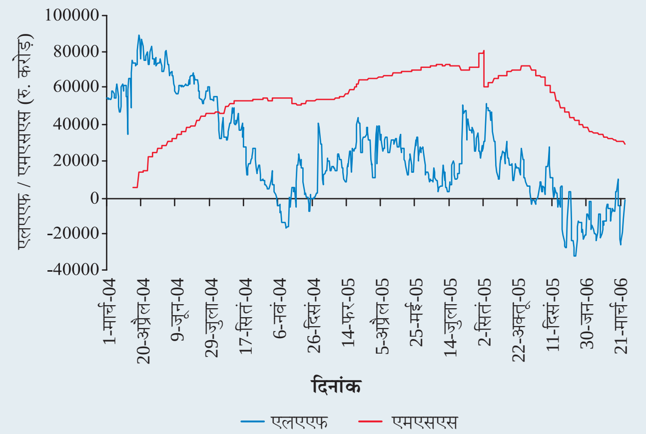

ऋण वृद्धि में वर्ष 2004 के मध्य से व्यापक परिवर्तन हुए हैं। इस प्रकार, 2004-05 में खाद्येतर ऋण में हुई वृद्धि 30 प्रतिशत से अधिक थी, जो 35 वर्षों का उच्चतम स्तर है। बैंक हाल के वर्षों में सरकारी प्रतिभूतियों में न्यूनतम सांविधिक चलनिधि अनुपात संबंधी आवश्यकता से कहीं अधिक मात्रा में अभिदान कर रहे हैं। एक दूरगामी आकलन करते हुए रिजर्व बैंक ने सितंबर 2005 से बाजार स्थिरीकरण योजना कम करना प्रारंभ किया और साप्ताहिक नीलामियों में बाजार स्थिरीकरण योजना अंश को 9 नवंबर 2005 से समाप्त कर दिया गया। इससे इंडिया मिलेनियम डिपाजिट की चुकौती में फंसी 7.1 बिलियन अमरीकी डॉलर के समकक्ष चलनिधि को व्यवस्थित ढंग से हटा लेने में सहायता मिली। इतनी बड़ी मात्रा में हटाई गई चलनिधि का प्रबंधन करने में मौद्रिक परिचालनों के लिए बड़ी चुनौती खड़ी हो जाने की आशंका थी। बॉक्स III में रिज़र्व बैंक द्वारा, चलनिधि संबंधी विसंगतियों को सीमित करने के लिए उठाए गए सकारात्मक कदमों का वर्णन है। ऋण की बढ़ती हुई उच्च मांग (17 मार्च 2006 को वर्ष-दर-वर्ष की 31.1 प्रतिशत की वृद्धि) के साथ-साथ चलनिधि की स्थिति 2005 के अधिकांश भाग के दौरान रही स्थिति की तुलना में काफी बदल गई है। चलनिधि समाशोधन सुविधा और बाजार स्थिरीकरण योजना जैसे साधनों की उपलब्धता के कारण रिज़र्व बैंक इन परिवर्तनों का उचित प्रकार से प्रबंधन कर सका।

इस दक्ष चलनिधि प्रबंधन के प्रमाण विनिमय दरों तथा ब्याज दरों - दोनों ही की उचित घट-बढ़ में देखे जा सकते हैं। अत्यधिक चलनिधि के समय में मांग दरें अनिवार्यतः रिवर्स रिपो दर के समान ही रहीं , जैसा कि अपेक्षित था, जबकि चलनिधि की कमी के समय में ये दरें रिपो दर के आसपास या थोड़ी उच्चतर रहीं (चार्ट 5)।

बॉक्स III : इंडिया मिलेनियम डिपाज़िट की चुकौती के दौरान चलनिधि प्रबंधन

इंडिया मिलेनियम डिपाजिट वर्ष 2000 में विदेशी मुद्रा में निर्दिष्ट जमाराशियां थीं जो भारत सरकार की सूचना पर भारतीय स्टेट बैंक द्वारा जारी की गई थीं। इससे पांच वर्षों की अवधि के लिए 5.5 बिलियन अमरीकी डॉलर की राशि जुटाई गई। अमरीकी डॉलर, पौंड स्टर्लिंग और यूरो में निर्दिष्ट जमाराशियों पर इंडिया मिलेनियम डिपाजिट की कूपन दर क्रमशः 8.50 प्रतिशत, 7.85 प्रतिशत और 6.85 प्रतिशत रही। इंडिया मिलेनियम डिपाजिट में अभिदान अनिवासी भारतीयों, भारतीय मूल के व्यक्तियों और विदेशी कंपनी निकायों तक सीमित रखा गया था। इंडिया मिलेनियम डिपाज़िट पर अर्जित ब्याज आय को कर से छूट प्राप्त थी तथा इसमें छः महीनों के बाद केवल अप्रत्यावर्तनीय भारतीय रुपए में ही अवधि पूर्व नकदीकरण का प्रावधान था। 28-29 दिसंबर 2005 को ये इंडिया मिलेनियम डिपाजिट परिपक्व हो गए तथा इसमें निहित भारी राशियों के चलनिधि प्रबंधन के लिए चुनौती खड़ी हो गई।

इंडिया मिलेनियम डिपाजिट की चुकौतियों के संदर्भ में चलनिधि प्रबंधन का कार्य एक मध्यावधि उद्देश्य के साथ मौद्रिक नीति का रुझान कायम रखते हुए असंतुलन को सीमित करने के लिए किया गया। चुकौती के कारण हुए बहिर्वाहों को इस संबंध में बनाई गई सुचारु व्यवस्था द्वारा पूरा किया गया। 27 से 29 दिसंबर 2005 के दौरान रिजर्व बैंक ने अपने विदेशी मुद्रा भंडार में से लगभग कुल 7.1 बिलियन अमरीकी डॉलर की विदेशी मुद्रा भारतीय स्टेट बैंक को बेची जिसकी रुपए में राशि करीब 32,000 करोड़ रुपए होती है। अपने स्तर पर स्टेट बैंक ने इन दायित्वों को पूरा करने के लिए आवश्यक रुपया संसाधन तैयार कर लिए थे। उस समय चलनिधि की अस्थायी तंगी को, दिसंबर के अंतिम सप्ताह में प्रति दिन औसतन करीब 23,000 करोड़ रुपए की चलनिधि रिपो विंडो (दूसरे एलएएफ सहित) से जारी करके पूरा किया गया जोकि इंडिया मिलेनियम डिपाजिट संबंधी चुकौतियों, अग्रिम कर-भुगतान और ऋण दिए जाने में निरंतर वृद्धि के कारण था। 28 नवंबर 2005 से उपलब्ध कराई गई दूसरी चलनिधि समायोजन सुविधा द्वारा बाजार के भागीदारों को चलनिधि प्रबंधन को सुचारू बनाने का अतिरिक्त अवसर प्रदान किया गया । इतनी बड़ी मात्रा की इंडिया मिलेनियम डिपाजिट देयता, जोकि एक समय ही करनी पड़ी, की सुचारू रूप से चुकौती वित्तीय बाजारों की बढ़ती परिपक्वता एवं लागू की गई चलनिधि प्रबंधन प्रणाली की शक्ति को प्रतिबिंबित करती है। जनवरी 2006 के पहले सप्ताह में अल्पावधि मुद्रा बाजार में उल्लेखनीय नरमी रही जो इंडिया मिलेनियम डिपाजिट की सुचारु चुकौती का परिचायक है, परंतु इसमें दूसरे सप्ताह में फिर से उछाल आया जो सरकारी प्रतिभूतियों की नियत नीलामी से उत्पन्न दबावों का परिचायक है।

बाजार को तैयार करना

चलनिधि का प्रबंधन करने में महत्वपूर्ण घटक रहा है केंद्रीय बैंक का सुचारु प्रबंधन और संचार संबंधी नीति। अगस्त 2004 में हेडलाइन मुद्रास्फीति दर बढ़कर 8.7 प्रतिशत हो गई जो आंशिक रूप से बढ़ते वैश्विक तेल मूल्यों और आंशिक रूप से विनिर्माण क्षेत्र की मुद्रास्फीति में हुई भारी वृद्धि के कारण थी। ब्याज दर चक्र में तीव्र बदलाव विशेष रूप से दिखाई दिए। इस समस्या का समाधान यथोचित मौद्रिक एवं राजकोषीय समेकन द्वारा भार को बांट कर और बाजार को ब्याज दरों में फिर से होनेवाले संभाव्य बदलाव के लिए तैयार करते हुए किया गया। नपे-तुले कदम उठाते हुए मौद्रिक नीति का रुझान बदल दिया गया तथा चरणबद्ध उपाय (जैसे सीआरआर और रिवर्स रिपो) किए गए। साथ ही, बैंकों को 'व्यापार के लिए धारित' और 'बिक्री के लिए उपलब्ध' श्रेणियो वाली 'प्रतिभूतियों को 'परिपक्वता के लिए धारित' श्रेणी में परिवर्तित करने की अनुमति दी गई, जिसके द्वारा उन्हें संभाव्य ब्याज दर आघातों के लिए कुछ कुशन उपलब्ध कराया जा सका। बाजारों को मौद्रिक नीति के रुझान के सावधानीपूर्ण संप्रेषण द्वारा मौद्रिक नीति के लिए तैयार किया गया था जिसके लिए उन्हें यह स्पष्ट किया गया कि केंद्रीय बैंक उचित चलनिधि के प्रावधान के प्रयास करेगा एवं मूल्य स्थिरता पर उतना ही बल देगा। वह नपे-तुले तरीके से उपाय करने पर विचार करेगा। मौद्रिक प्रबंधन के कारण विश्वसनीयता बढ़ाने और मुद्रास्फीति के दुष्प्रभावों को कम रखने में सफलता मिली है। हेडलाइन मुद्रास्फीति कम हुई तथा वर्ष की समाप्ति पर वह 5.1 प्रतिशत पर आ गई। इस वर्ष के प्रारंभ में फिर से मुद्रास्फीति अस्थाई रूप से बढ़ गई परंतु इसे केंद्रीय बैंक को अधिक चलनिधि को खपा लेने की कार्रवाई करने की जरूरत होने पर भी सीमा में रखा गया। अक्तूबर 2005 में फिर से बाजारों से कहा गया कि केंद्रीय बैंक नपे-तुले कदम उठाने और त्वरित कार्रवाई करने के लिए तत्पर है और वास्तविक ऋण जरूरतों को पूरा करना सुनिश्चित करने के साथ-साथ मूल्य स्थिरता पर बल दिया जाएगा। नीति संबंधी सूचनाओं के साथ-साथ मुद्रास्फीति को दृढ़ता से नियंत्रित रखने के लिए विश्वसनीय कार्रवाई भी की जाती है।

अभी हाल के समय में, दिसंबर 2005 के दौरान, चलनिधि की कमी की स्थिति के साथ, मुद्रा बाजारों में अस्थायी अस्थिरता की स्थिति में इंडिया मिलेनियम डिपाज़िट की चुकौतियां सफलतापूर्वक की गईं। तथापि, मध्यावधि उद्देश्य के साथ, मौद्रिक नीति के रुझानों के अनुरूप असंतुलनों को सीमित रखने के लिए मौद्रिक नीति संबंधी परिचालन किए गए। इसी के साथ-साथ हाल के महीनों में छिटपुट कारणों से हुई चलनिधि की तंगी को हल करने के लिए आवश्यक चलनिधि भी उपलब्ध कराई गई। यह भी कह सकते हैं कि चलनिधि के प्रबंधन के लिए रिजर्व बैंक के पास पर्याप्त साधन हैं।

भारतीय अनुभवों से सबक लेना तथा भावी रणनीति

भारी मात्रा में तथा अस्थिर पूंजी प्रवाहों की स्थिति में चलनिधि प्रबंधन करने में भारत को मिले अनुभवों से क्या सबक मिला है?

पहले, क्रमिक रूप से आगे बढ़ने की नीति अपनाते हुए परंतु पूर्वस्थिति में आने से बचते हुए , सुधार अधिक स्थिर रीति से लागू करते हुए , पूंजी अंतर्वाहों को अधिक स्थिर आधार पर बनाए रख पाया है तथा कुछ अन्य उभरते बाजारों में देखी गई अस्थिरता की तुलना में भारत में अस्थिरता भी कम रही। इससे केंद्रीय बैंकों को चक्रीय संक्रमण की स्थिति में ब्याज दरों को सुचारु बनाने में सहायता मिली है।

दूसरे, जिन मामलों में मुद्रा और ऋण बाजार सुदृढ़ हैं, वहां रिपो परिचालनों के जरिए खुले बाजार परिचालन विकसित करना, विशेष रूप से चलनिधि प्रबंधन के समष्टि आर्थिक उद्देश्य के लिए समष्टि आर्थिक क्षमताएं निर्मित करने हेतु महत्वपूर्ण है। भारत में, एलएएफ का उभरना एक ऐसा बड़ा घटक है जिससे बहुत भारी और अस्थिर पूंजी प्रवाहों के बीच चलनिधि को प्रबंधित करने और इस वातावरण में अल्पावधि ब्याज दरों को स्थिर रखने में सहायता मिली। उसने मौद्रिक नीति के साधनों का दायरा व्यापक बना दिया और रिजर्व बैंक को ब्याज दरों के न्यूनतर दायरे में परिचालन करने की क्षमता प्रदान की। जिन ब्याज दरों पर केंद्रीय बैंक परिचालन करता है उन्हें अल्पावधि पर अपेक्षाकृत छोटे दायरे में सीमित रखे जाने से बाजार के कार्यकलाप पुख्ता हो गए।

तीसरे, साधनों की कमी के कारण होनेवाले (चलनिधि के) निष्प्रभावीकरण की सीमाओं के मद्देनजर भारत के मौद्रिक प्राधिकारियों ने सावधानीपूर्वक नीति अपनाई है जिससे, केंद्रीय बैंक के तुलनपत्र की शक्ति तथा केंद्रीय बैंक की विश्वसनीयता बनाए रखी गई है, और ऋण बाजारों को बहुत ही कम आघात हुए। प्रारंभ में बाजार स्थिरीकरण योजना शुरु करने का विचार ही नहीं था यद्यपि 1993-94 से पूंजी प्रवाह बहुत बढ़े थे। तथापि, वर्ष 2000 से विद्यमान भारी अधिशेष चलनिधि के चलते खुले बाजार परिचालनों को बनाए रखने के लिए बाजार स्थिरीकरण योजना मौद्रिक नीति के काफी उपयोगी साधन के रूप में उभरा है। बाजार स्थिरीकरण योजना की लागत मामूली होती है, परंतु इससे मौद्रिक प्राधिकारियों को अधिशेष और घाटे की स्थिति में कारोबार तथा चलनिधि चक्रों का प्रबंधन करने में सहायता मिली है। बाजार स्थिरीकरण योजना के आने के साथ, मौद्रिक प्राधिकारियों के पास अब दिन-प्रति-दिन के चलनिधि प्रबंधन के लिए चलनिधि समाशोधन सुविधा का प्रयोग करने, अर्द्धस्थायी विसंगतियों को ठीक करने के लिए बाजार स्थिरीकरण योजना का प्रयोग करने तथा वस्तुत: दीर्घावधिक चलनिधि अधिशेष या घाटे के लिए दिनांकित प्रतिभूतियों की एकमुश्त बिक्री/खरीद का विकल्प उपलब्ध है। बाजार स्थिरीकरण योजना का अनुभव रहा है कि परिचालनगत ढांचे एवं और क्रियाविधियों में परिवर्तन होते रहते हैं और हमें उभरती चलनिधि स्थितियों के प्रति बाजार परिचालनों को सही तरीके से समझने के लिए नवोन्मेष को अपनाते रहना होगा।

चौथे, बाजारों की व्यष्टि संरचना पर ध्यान केंद्रित हुए तथा संपार्श्विकीकृत उधार लेने और ऋण देने संबंधी दायित्व (सीबीएलओ), बाजार रिपो, ब्याज दर स्वैप, जमा प्रमाणपत्र (सीडी) और वाणिज्यिक पत्र (सीपी) जैसे व्यापक श्रेणीवाले साधनों को इस प्रकार विकसित करते हुए ताकि विभिन्न उत्पादों की मांग को पूरा करते हुए बाजार के विखंडन से बचा जा सके, चलनिधि प्रबंधन को अधिक सुदृढ़ आधार पर संपादित किया जा सकेगा। बाजार और केंद्रीय बैंक के संव्यवहार संस्थागत विकास के लिए बनाए गए हैं। तथापि, भुगतान और निपटान प्रणाली सबसे अधिक मुश्किल क्षेत्र साबित हुआ है, परंतु इसने ही अभी स्थापित चलनिधि प्रबंधन क्रियाविधि की व्यष्टि और समष्टि गतिविधियों के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान किया। व्यष्टि पहलुओं पर ध्यान केंद्रित किए जाने से नीति संबंधी परिवर्तनों का पूर्वसंकेत देने की केंद्रीय बैंक की क्षमता और बढ़ गई।

पांचवें, चलनिधि प्रबंधन के लिए परोक्ष साधन निर्मित करने के प्रयास के साथ, मौद्रिक नीति की प्रभावशीलता में सुधार हुआ। खजाना बिलों और तरल दिनांकित प्रतिभूतियों से होने वाली आय तथा रात भर की ब्याज दरों के बीच का संबंध काफी सुदृढ़ हो गया है। जहां ऋण प्रदान करने की दरें और यहां तक कि जमाराशि संबंधी दरें समायोजन के लिए काफी समय लेती रहीं है, वहीं अभी हाल के समय में प्रभावशीलता और सुदृढ़ हो गई है। यह नोट करना महत्वपूर्ण है कि भारी मात्रा में अधिशेष की स्थिति में, प्रभावशीलता स्वाभाविक रूप से अपेक्षाकृत ज्यादा कमजोर होती है। तथापि, अभी हाल की अवधि में चूंकि केंद्रीय बैंक ने अधिक चलनिधि की काफी राशि खपा ली थी, दर के संकेत की दक्षता बहुत अधिक बढ़ गई है।

छठे, पूर्व संकेत देने से मौद्रिक नीति निर्धारण के वातावरण में सुधार होता है, क्योंकि केंद्रीय बैंक का चलनिधि प्रबंधन अल्पावधि ब्याज दरों पर अपना नियंत्रण इन दरों की अस्थिरता को कम करते हुए स्थापित कर लेता है। बैंकों के लिए कार्यकारी शेष संबंधी कठिनाइयों को हटा कर, केंद्रीय बैंक ब्याज दरों की अवधि संरचना को प्रभावित कर सकता है, जैसा कि मुद्रा बाजार दरों में विभिन्न परिपक्वताओं और सरकारी आय वक्र से प्रतिबिंबित हुआ है।

अंततः,चलनिधि की स्थितियों में आने वाली अस्थायी असंगतियों से मौद्रिक परिचालनों के तत्काल लक्ष्यों को बनाए रखने में समस्या खड़ी होती है, लेकिन चलनिधि प्रबंधन के समग्र उद्देश्य को प्रमुखता दिए जाने की जरूरत है। भारत में, चलनिधि की स्थिति में अचानक होनेवाले अंतर से कठिनाइयां खड़ी हो जाने के बावजूद समग्र नीतियों की व्यष्टि आर्थिक सफलता यह है कि मुद्रास्फीति काफी कम रही है जो फिलहाल 4.7 प्रतिशत दर पर पिछले पांच वर्षों में औसतन 5-0 प्रतिशत की हेडलाइन दर से नीचे रही है। उपभोक्ता मूल्य मुद्रास्फीति का औसत अंक-दर-अंक आधार पर लगभग 4.0 प्रतिशत तथा औसत आधार पर 3.9 प्रतिशत पर और भी न्यूनतर रहा।

भारत में चलनिधि प्रबंधन में तुलनात्मक सफलता के बावजूद अभी और कई चुनौतियां सामने खड़ी हैं।

पहले, ऋण बाजार की मात्रा बहुत बड़ी होते हुए भी सक्रिय मीयादी बाजार की कमी, प्रतिभूतियों के एक बड़े भारी सेट की तरलता का अभाव और कंपनी ऋण बाजार की सीमा प्रस्तावित परिवर्तनों के लिए बाधक बनी हुई हैं।

दूसरे, रिजर्व बैंक ने अब बाजार सहभागियों को उनकी अपनी सीमान्त चलनिधि मांग को हर कार्य दिन पर दिन में दो बार पूरा कर लेने की क्षमता प्रदान की है लेकिन इसमें समस्या यह है कि बाजार में केंद्रीय बैंक के निष्क्रिय परिचालनों के परिणामस्वरूप हो सकता है कुछ बाजार सहभागी अपने स्वयं के चलनिधि प्रबंधन के लिए पर्याप्त प्रयास न करें।

तीसरे, जैसे-जैसे प्रणाली एसएलआर प्रतिभूतियां न्यूनतम स्तर पर बनाए रखने की ओर बढ़ती है, चलनिधि का प्रावधान करना तब तक और जटिल बना रहेगा जब तक कि बाजार के सहभागियों को अपनी चलनिधि की असंगतियों को ठीक कर लेने के लिए सुविधा प्रदान करने हेतु साधनों/लिखतों का क्षेत्र और व्यापक नहीं बना दिया जाता।

चौथे, एफआरबीएम अधिनियम, 2003 के अनुसरण में रिजर्व बैंक के प्राथमिक बाजार से हट जाने के बाद, इस संस्थागत अंतर को न्यूनतम आवश्यक परिवर्तन करते हुए पूरा किए जाने की जरूरत है ताकि बाजार परिचालन अपनी क्षमता, केंद्रीय बैंक तथा बाजार सहभागियों-दोनों की दृष्टि से किए जाते रहें।

अंततः, चलनिधि प्रबंधन में और सुधार लाना हमारी प्रणाली में चलनिधि का पूर्वानुमान लगाने की हमारी क्षमता पर निर्भर होगा । जिस छोटी अवधि के भीतर चलनिधि की मात्रा में बड़े पैमाने पर बदलाव आ रहे हैं, वह अल्पावधि ब्याज दरों को लक्षित करने में सबसे बड़ी बाधा बन गई है। इस संदर्भ में राजकोषीय स्थिति और सरकारी नकदी शेषों तथा साथ ही विदेशी पूंजी प्रवाहों के समय का आकलन करना सर्वाधिक महत्व का होगा है।

संदर्भ

1. 1985-86 से 1997-98 के दौरान अधिकतम कूपन दर 6.5 प्रतिशत से बढ़ाकर 11.5 प्रतिशत कर दी गई। अधिकतम परिपक्वता 30 से घटाकर 20 वर्ष कर दी गई।
2. खजाना बिलों की नीलामियों में नवंबर 1986 में जारी 182 दिवसीय खजाना बिल, अप्रैल 1992 में जारी 364 दिवसीय खजाना बिल और जनवरी 1993 में जारी 91 दिवसीय खजाना बिल शामिल हैं।
3. उस समय प्रयुक्त शब्द था 'चलनिधि खपा लेने के लिए' रिपोर्ट और प्रक्षेपित करने के लिए रिवर्स रिपोर्ट । अंतरराष्ट्रीय स्तर पर, व्यवहार में, आम तौर पर केंद्रीय बैंक चलनिधि प्रक्षेपित करने के लिए 'रिपो' शब्द का प्रयोग करते हैं। रिपो निधियां उधार लेने के लिखत के रूप में परिभाषित है। केंद्रीय बैंकों ने बाजार के दृष्टिकोण से इस शब्द के प्रयोग का विकल्प दिया है। रिजर्व बैंक इसे 29 अक्तूबर 2004 से अपनाया है और इस नई परिभाषा के अनुसार रिपो और रिवर्स रिपो शब्द का प्रयोग किया जाता है।